श्री वल्लभ साखी

श्री वल्लभ पद वन्दों सदा, सरस होत सब ज्ञान ।
रसिक रटत आनंद सों, करत सुधा रस पान ॥१॥
और कछु जान्यो नहीं, बिना श्री वल्लभ एक।
कर गहि के छांडे नही, जिनकी ऐसी टेक ॥२॥
श्री वल्लभ वल्लभ रटत हो, जहा देखो तहां येह।
इनहीं छांड औरही भजे , तो जर जावो वह देह ॥३॥
देवी देव आराधिके , भूल्यो सब संसार ।
श्री वल्लभ नाम नौका बिना, कहो को उतर्यो पार॥४॥
ऐसे प्रभु क्यों बिसारिये , जाकी कृपा अपार।
पल पल में रटते रहो, श्री वल्लभ नाम उच्चार ॥५॥
श्री वल्लभ नाम अगाध है , जहाँ तहाँ तू मत बोल।
जब हरिजन ग्राहक मिले , वा आगे तू खोल॥६॥
श्री वल्लभवर को छांडि के , और देव को धाय ।
ता मुख पन्हैया कूटिये , जब लग कूटी जाय॥७॥
श्री वल्लभ वल्लभ रटत हो, वल्लभ जीवन प्राण ।
श्रीवल्लभ कबहू न बिसारिहों, मोहि मात-पिता की आन॥८॥

मैं इन चरन न छांड हों, श्री वल्लभ वर व्रज ईश ॥
जो लो तन में श्वास है , तो लो चरन धरो मम शीश॥९॥
बहुत दिना भटकत फिर्यो, कछु ना आयो साथ।
श्री वल्लभ सुमर्यो तबे , पर्यो पदारथ हाथ ॥१०॥
बहे जात भव सिंधु में , दैवी सृष्टी अपार।
तिन को करन उद्धार प्रभु , प्रकटे परम उदार॥११॥
श्री वल्लभ करुणा करी, कलि में लियो अवतार ।
महा पतित उद्धार के , कीनों यश विस्तार॥१२॥
श्री वल्लभ वल्लभ कहत हो, वल्लभ चितवन बैन ।
श्री वल्लभ छांड औरही भजे ,तो फूट जावो दोऊ नैन॥१३॥
धूर परो वा वदन में , जाको चित्त नहीं ठोर।
श्री वल्लभ वर को बिसारिके , नयनन निरखे और ॥१४॥
शरणागति जब लेत है , करत त्रिविध दुःख दूर ।
शोक मोह ते काढि के , देत आनंद भरपूर ॥१५॥
यश ही फेल्यो जगत में , अधम उद्धारण आय ।
तिनकी विनती करत हो, चरन कमल चित्त लाय ॥१६॥
पतितन में विख्यात हों, महापतित मम नाम ।

अब याचक होय जाच हो, शरणागति सब याम ॥१७॥
श्री वल्लभ विट्ठलनाथ जु , सुमरो एक घरी ।
ताके पातक यों जरे , ज्यों अग्नि में लकरी ॥१८॥
धरणी अति व्याकुल भई, विधि सों करी पुकार।
श्री वल्लभ अवतार ले , तार्यो सब संसार ॥१९॥
श्री वल्लभ राजकुमार बिनु , मिथ्या सब संसार ।
चढि कागद की नाव पर, कहो को उतर्यो पार॥२०॥
कलयुगने सब धर्म के , द्वार जु रोके आय।
श्री वल्लभ खिड़की प्रेम की, निकस जाय सो जाय ॥२१॥
भगवद भगवदीय एक हैं , तिन सो राखों नेह ।
भवसागर के तरन की, नीकी नौका येह ॥२२॥
श्री वल्लभ कल्पद्रुम फल्यो, फल लाग्यो विट्ठलेश ।
शाखा सब बालक भये , ताको पार न पावत शेष ॥२३॥
श्री वल्लभ आवत में सुने , कछु नियरे कछु दूर ।
इन पलकन सो मगझार हो, व्रज गलियन की धूर ॥२४॥
कृपा सिंधु जल सींच के , राख्यो जीवन मूल ।
स्नेह बिना मुरझात है , प्रेम बाग के फूल ॥२५॥

जग में मिलन अनूप है , भगवदियन को संग।
तिनके संग प्रताप तें , होत श्याम सो रं ग ॥२६॥
हरि जन आवे बारने , हँसी हँसी नावे शीश ।
उनके मन की वे जाने , मेरे मन जगदीश ॥२७॥
हरि बडे हरि जन बडे , बडे हैं हरि के दास ।
हरिजन सों हरि पावहीं , जो हैं इन के पास॥२८॥
मन नग ताको दीजिये , जो प्रेम पारखी होय ।
नातर रहिये मौन व्हे , काहे जीवन खोय ॥२९॥
प्रेम पारखी जो मिले , ताको करि मनुहार ।
तिन सों प्रिया प्रीतम मिले , सब सुख दीजे वार ॥३०॥
रंचक दोष ना देखिये , वे गुन प्रेम अमोल ।
प्रेम सुहागी जो मिले , तासों अंतर खोल ॥३१॥
साधन करो दृढ आसरो, कुल भजवो फल एक।
पलक पलक के ऊपरे , वारो कल्प अनेक ॥३२॥
श्री वल्लभ जीवन प्राण हैं , नयनन राखो घेर ।
पलकन के परदा करो, जान न देहो फेर॥३३॥
पूरण ब्रह्म प्रकट भये , श्री लक्षमण भट्ट गेह ।

निजजन पर बरखत सदा, श्री व्रजपति पद नेह ॥३४॥
जागत सोवत स्वप्न में , भोर द्योस निश सांझ ।
श्री वल्लभ व्रज ईश के , चरण धरो हिय माँझ॥३५॥
हा हा मानो कहत हो, करि गिरिधर सो नेह ।
बहुरि न ऐसी पावही , उत्तम मानुष देह॥३६॥
चतुराई चूल्हे परो, ज्ञानी को यम खाऊं ।
जा तन सो सेवा नहीं, सो जडामूल सो जाऊं ॥३७॥
देखी देह सुरंग यह, मति भूले मन मांहि ।
श्री वल्लभ बिनु और कोऊ, तेरो संगी नाही ॥३८॥
तेरी साथिन देह नहीं , याके रंग मत भूल ।
अंत तू ही पछतायगो, तुरत मिलेगी धूल ॥३९॥
देही देखी सुरंग यह, मती लडावे लाड़ ।
गणिका की सी मित्रता, अंत होयगी भांड ॥४०॥
देही देख सुरंग यह मत भूले तू गवार ।
हाड़ मांस की कोटरी , भीतर भरी भंगार ॥४१॥
महामान मद चातुरी , गरवाई और नेह ।
ये पाँचों जब जायेंगे , तब मानो सुख देह ॥४२॥

भवसागर के तरन की, बडी अटपटी चाल ।
श्री विट्ठलेश प्रताप बल , उतरत है तत्काल ॥४३॥
मीन रहत जल आसरे , निकसत ही मर जाय ।
त्यों श्री विट्ठलनाथ के , चरण कमल चित्त लाय ॥४४॥
श्री वल्लभ को कल्पद्रुम, छाय रह्यो जग मांहि ।
पुरुषोत्तम फल देत हैं , नेक जो बैठों छांह ॥४५॥
चतुराई सोई भली, जो कृष्ण कथा रस लीन ।
परधन परमन हरन को, कहिए वही प्रवीन ॥४६॥
चतुराई चूल्हे परो , ज्ञानी को यम खाऊ ।
दया भाव हरि भक्ति बिन , ज्ञान परो जरि जाऊ ॥४७॥
श्री वल्लभ सुमर्यो नहीं, बोलियो अटपटो बोल ।
ताकि जननी बोजन मरी, वृथा बजावे ढोल ॥४८॥
घर आवे वैष्णव जबहीं , दीजे चार रतन ।
आसन, जल, वाणी मधुर , यथाशक्ति सो अन्न ॥४९॥
श्री वल्लभ धीरज धरे ते , कुंजर मन भर खाय ।
एक टूक के कारणे , स्वान बहुत घर जाय ॥५०॥
रसिक जन बहु ना मिले , सिंह यूथ नहिं होय ।

विरह बेल जहाँ तहाँ नहीं, घट घट प्रेम न होय ॥५१॥
हरिजन की हाँसी करे , ताहि सकल विधि हानि ।
तापर कोपत व्रजपति, दुःख को नहिं परमान ॥५२॥
छिन उतरे छिन ही चढे , छिन छिन आतुर होय ।
निश वासर भीज्यो रहे , प्रेमी कहिये सोय ॥५३॥
उर बिच गोकुल नयन जल , मुख श्री वल्लभ नाम ।
अस तादृशी के संग तें , होत सकल सिद्ध काम ॥५४॥
बिनु देखे आतुर रहे , प्रेम बाग को फूल ।
चित्त ना माने ताहि बिनु , प्रेम जो सबको मूल ॥५५॥
कृष्ण प्रेम मातो रहे , घरे ना काहू शंक ।
तीन गांठ कोपीन पे , गिने इन्द्र को रंक ॥५६॥
श्री वल्लभ वल्लभ जे कहे , रहत सदा मन तोष ।
ताके पातक यो जरे , ज्यों सूरज ते ओस ॥५७॥
श्री वल्लभ श्री वल्लभ भजे , सदा सोहिलो होय ।
दुःख भाजे , दारिद्र्य टरे , बेरी न गाजे कोय ॥५८॥
श्री वल्लभ वर को छांडि के , भजे जो भैरव भूत ।
अंत फजीती होयगी, ज्यों गणिका को पूत ॥५९॥

वैष्णव की झोपडी भली, और देव को गाम ।
आग लगो वा मेंड में , जहाँ न वल्लभ नाम ॥६०॥
श्री वल्लभ पर रुचि नहीं , ना वैष्णव पर स्नेह ।
ताको जन्म वृथा जु त्यों , ज्यों फागुन को मेह ॥६१॥
मोमे तिल भर गुण नहिं , तुम हो गुणन के जहाज।
रीझ बूझ चित्त राखियों , बाँह गहे की लाज ॥६२॥
तीन देव के भजन ते , सिद्ध होत नहिं काम ।
त्रिमाया को प्रलय कर , हरि मिलवे हरिनाम ॥६३॥
सुमरत जाय कलेश मिटे , श्री वल्लभ निज नाम ।
लीला लहर समुद्र में , भीजो आठों याम ॥६४॥
तिनके पद युग कमल की, चरण रेणु सुखदाय ।
हिय में धारण किये ते , सब चिन्ता मिट जाय ॥६५॥
श्री वल्लभ कुल बालक सबे , सबही एक स्वरूप ।
छोटो बडो न जानियो, सबहि अग्नि स्वरूप ॥६६॥
मन नग ताको दीजिये , जो प्रेम पारखी होय ।
नातर रहिये मौन गहि , वृथा न जीवन खोय ॥६७॥
मन पंछी तब लगि उड़े , विषय वासना मांहि ।

प्रेम बाज की झपट में , जब लग आयो नाहि ॥६८॥
श्री वल्लभ मन को भामतो, मो मन रह्यो समाय ।
ज्यों महेंदी के पात में , लाली लखी न जाय ॥६९॥
श्री वल्लभ विट्ठल रूप को, को करि सके विचार ।
गूढ भाव यह स्वामिनी , प्रगट कृष्ण अवतार ॥७०॥
श्री वृंदावन के दरस ते , भये जीव अनुकूल ।
भवसागर अथाह जल, उतरन को यह तूल ॥७१॥
श्री वृंदावन बानिक बन्यो, कुंज कुंज अलि केलि ।
अरुझी श्याम तमाल सों , मानो कंचन वेलि ॥७२॥
श्री वृंदावन के वृक्षको , मरम न जाने कोय ।
एक पात को सुमर के , आप चतुर्भुज होय ॥७३॥
कोटि पाप छिन में टरे , लेहि वृंदावन नाम ।
तीन लोक पर गाजिये , सुखनिधि गोकुल गाम ॥७४॥
नन्दनंदन शिर राजही , बरसानो वृषभान ।
दौउ मिल क्रीडा करत है , इत गोपी उत कान्ह ॥७५॥
श्री यमनाजी सो नेह करि, यह नेमी तू लेह ।
श्री वल्लभ के दास बिनु , औरन सो तजि स्नेह ॥७६॥

मन पंछी तन पांख कर, उड़ जाओ वह देश ।
श्री गोकुल गाम सुहावनो, जहां गोकुल चन्द्र नरेश ॥७७॥
मणिन खचित दोऊ कूल हैं , सीढ़ी सुभग नग हीर ।
श्री यमुनाजी हरि भामती , धरे सुभग वपु नीर ॥७८॥
उभय कूल निज खंभ है , तरंग जु सीढ़ी मान ।
श्री यमुना जगत वैकुंठ की, प्रगट नसैनी जान ॥७९॥
रतन खचित कंचन महा , श्री वृदावन की भूमि ।
कल्पवृक्ष से द्रुम रहे , फल फूलन करि झूमि ॥८०॥
धन्य धन्य श्री गिरिराज जु , हरिदासन में राय ।
सान्निध्य सेवा करत है , बल मोहन जिय भाय ॥८१॥
कोटि कटत अघ रटत तें , मिटत सकल जंजाल ।
प्रगट भये कलिकाल में , देव दमन नंदलाल ॥८२॥
प्रौढ़भाव गिरिवरधरन, श्री नवनीत दयाल ।
श्री मथुरानाथ निकुंजपति , श्री विट्ठलेश सुख साल ॥८३॥
श्री द्वारकेश तदभाव में , गोकुलेश ब्रज भूप ।
अद्भुत गोकुल चन्द्रमा , मन्मथ मोहन रूप ॥८४॥
माट लिये माखन लिये , नूपुर बाजे पांय ।

नृत्यत नटवरलाल जू , मुदित यशोदा माय ॥८५॥
झूलत पलना मोद में , श्री बालकृष्ण रसरास ।
तोरे शकट, रस बस किये , ब्रज युवतिन करि हास ॥८६॥
श्री गिरिधर गोविन्द जू , बालकृष्ण गोकुलेश ।
रघुपति यदुपति घनश्याम जु , प्रगटे ब्रह्म विशेष ॥८७॥
परम सुखद अभिराम है , श्री गोकुल सुखधाम ।
घुटुरुवन खेलत फिरत , श्री कमलनयन घनश्याम ॥८८॥
गोविन्द घाट सुहावनो , छोकर परम अनूप ।
बैठक वल्लभ देव की , निजजन को फल रूप ॥८९॥
बेलि लता बहु भांति की, द्रुमन रही लपटाय ।
मानो नायक नायिका, मिली मान तजि आय ॥९०॥
केकि शुक पिक द्रुम चढे , गुंजत है बहु भाय ।
रास केलि के आगमन , प्रमुदित मंगल गाय ॥९१॥
गोपि ओपी जगत में , चलिके उलटी रीत ।
तिन के पद वंदन किये , बढ़त कृष्ण सों प्रीत ॥९२॥
ठकुरानी घाट सुहावनो , छोकर परम अनूप ।
दामोदर दास सेवा करे , जो ललिता रस रूप ॥९३॥

कृष्णदास नंददास जू , सूर सु परमानंद ।
कुंभन चतुर्भुजदास जु , छितस्वामी गोविंद ॥९४॥
श्री राधामाधो परम धन, शुक अरु व्यास लियो घूंट ।
यह धन खरचे घटत नही, चोर लेत ना लूट ॥९५॥
श्री वल्लभ रतन अमोल है , चुप कर दीजे ताल ।
ग्राहक मिले खोलिये , कूंची शब्द रसाल ॥९६॥
सबको प्रिय सबको सुखद , हरि आदिक सब धाम ।
व्रज लीला सव स्फूरत है , श्री वल्लभ सुमिरत नाम ॥९७॥
चार वेद के पढ़े ते , जीत्यो जाय न कोय ।
पुष्टिमार्ग सिद्धांत ते , विजय जगत में होय ॥९८॥
वृंदावन की माधुरी , नित नित नौतन रंग ।
कृष्णदास क्यों पाइये , बिनु रसिकन के संग ॥९९॥
जो गावे सीखे सुने , मन वच कर्म समेत ।
'रसिकराय' सुमिरो सदा , मन वांछित फल देत ॥१००॥

॥श्री हरिराय महाप्रभु रचित श्री वल्लभ साखी संपूर्णम ॥